हुसैन और इस्लाम

सैय्यदुल उलमा सैय्यद अली नक़ी नक़वी ताबा सराह

एतिहासिक संसार में हुसैन का परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। आपके व्यक्तित्व तथा महान् कार्यों के सामने करोड़ों मनुष्य मस्तक झुकाये हुए हैं। संभव है कि आपने उनके जीवन की अदभुत घटनाओं को न सुना हो, परन्तु आपने हुसैन का नाम तो अवश्य ही सुना होगा और यह भी जानते होंगे कि वे किसी बड़े एतिहासिक परिवर्तन के चरित्रनायक है। संभव है कि आपके हृदय में यह भी विचार उत्पन्न होता हो कि हुसैन कौन थे और कर्बला के महासमर में विशेषताएँ क्या हैं जो इन महापुरुष से सम्बन्ध रखती हैं। यदि इस विषय में आपकी जिज्ञासा है तो कृपया थोड़ा समय व्यय करके हुसैन और उनके मिशन, जिसके सम्बन्ध में उन्होंने बड़े से बड़े बलिदान देने में तनिक भी आनाकानी नहीं की, उनका परिचय प्राप्त कीजिये, जिससे आपको हुसैन और उनके कार्यों का सच्चा ज्ञान प्राप्त करने का अवसर सुलभ हो जाए।

हुसैन कौन थे?

हुसैन के साथ इस्लाम का आत्मिक सम्बन्ध है। छठी शताब्दी में जब कि संसार में घोर अन्धकार छाया हुआ था और चारों ओर लड़ाई दंगा ही दिखाई पड़ता था प्रायदीप अरब में इस्लाम का सूर्य उदय हुआ, जिसकी किरणें हिजाज़ की राजधानी मक्का शहर से प्रकट हुई और फिर धीरे–धीरे उन्होंने सारे संसार को प्रकाशित कर दिया। यह प्यारा धर्म जिसका नाम इस्लाम है, दो महापुरुषों के परिश्रम का फल है। जिनमें से एक तो हज़रत मुहम्मद (स0) और दूसरे उनके चचेरे भाई हज़रत अली (अ0) हैं। इन्हीं महापुरुषों ने इस्लाम धर्म को उन्नति दी तथा बड़े–बड़े सहाबियों ने भी सहायता की जो सदा इतिहास के अन्दर प्रसिद्ध रहेंगे यद्यपि इनको इस्लाम के स्थापित करने और पीछे आने वाली घटनाओं से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है और न वे विशेष प्रचारक ही कहे जा सकते हैं। इन्हीं दोनों भाइयों (हज़रत मुहम्मद स0 और हज़रत अली अ0) की अदभुत दृढ़ता और अपने रुधिर को पसीना समझ लेने का प्रभाव यह हुआ कि इस्लाम की नीव पड़ी और वह संसार में इस वेग से फैला।

प्रकृति को इन दोनों भाइयों के सम्बन्ध को अत्यन्त घनिष्ट बनाना था। इसी कारण हज़रत मुहम्मद (स0) ने अपनी इकलौती बेटी बीबी फ़ातिमा (स0) का विवाह हज़रत अली (अ0) के साथ कर दिया और इस प्रकार हज़रत अली का पैग़म्बर (स0) के भाई होने के अतिरिक्त दामाद होने का गौरव भी प्राप्त हुआ और इस नाते का प्रभाव इस्लाम के फैलाने में और भी अधिक सहायक हुआ इन्हीं माँ बाप अर्थात हज़रत अली (अ0) और बीबी फ़ातिमा (स0) से दो बच्चे पैदा हुए जिनके नाम हसन और हुसैन थे। इनका जन्म उस समय हुआ जब कि इस्लाम एक बच्चे की भांति रसूल की गोद में पल रहा था। इस प्रकार इन बच्चों तथा इस्लाम का पालन पोषण एक ही साथ होने लगा। ये बच्चे एक ओर इस्लाम के नेता अपने नाना और दूसरी ओर इस्लाम के सहायक अपने पिता की गोदों में पलने लगे और इस्लाम की सेवा

में बचपन ही से तत्पर हो गये और जितनी आयु बढ़ती गई उनके ह्रदय में इस्लाम का सच्चा प्रेम बढ़ता गया।

धार्मिक सिद्धान्त से ये दोनों महापुरुष अर्थात हज़रत इमाम हसन और हज़रत इमाम हुसैन संसार के नेता और इस्लाम के रक्षक होते हैं। एतिहासिक रूप से यह एक मानी हुई बात है कि इन दोनों महापुरुषों ने अपना जीवन इस्लाम की सहानुभूति और रक्षा में आदर्श की भांति गुज़ारा और इसीलिए इस्लाम और उसके नियमों से जितना घनिष्ट प्रेम और सम्बन्ध इनको हो सकता था वह किसी और को नहीं हो सकता।

बनी उमैय्या का शासन या इतिहास का एक काला धब्बा

इस्लाम के पैग़म्बर की मृत्यु इस्लाम के लिए एक बहुत बड़ी आपत्ति थी। पैग़म्बर (स0) के मरने के बाद इस्लाम का एक नया रूप प्रकट हुआ। इस नये रूप के आरम्भ में कुछ दिनों तक तो इस्लाम में सादगी और ऊपर की टीमटाम से घृणा इत्यादि गुण मौजूद रहे। किन्तु जब देशों के जीतने का काम बढ़ता गया, क़ैसर व कसरा के देशों (सीरिया, ईरान) पर मुसलमानों का अधिकार हुआ और बड़े—बड़े राज्य अधिकार में आये मुसलमानों में केवल हुकूमत ही की इच्छा शेष रह गई और धार्मिक सिद्धांतों पर चलने के बदले केवल राजनैतिक झगड़ों में पड़ने और दुर्बलों को हानि पहुँचाने और उन पर अन्याय करने का समय आरम्भ हुआ। रसूल (स0) और उनके कुटुम्ब (बनी हाशिम) के पुराने बैरी बनी उमैया जो सदा रसूल के इस्लाम फैलाने के विरूद्ध रहते थे और सबसे पीछे विवश होकर इस्लाम धर्म ग्रहण किया था उन उमैया के कुटुम्बियों को रसूल की मृत्यु के बाद अपनी इच्छाओं को पूरा करने का अच्छा अवसर मिला। दूसरे ख़लीफा हज़रत उमर के समय में शाम (सीरिया) पर बनीउमैया का पूरा अधिकार हो गया था जो केवल गवर्नर के पद पर था। और तीसरे ख़लीफा हज़रत उसमान के समय में तो शाम के शासक अमीरे मुआविया का पूरा—पूरा अधिकार हो गया और उमैय्या की संतान को इस्लाम से पुराने बैर को पूरा करने का समय मिला। हज़रत उस्मान, अर्थात तीसरे ख़लीफा के साथ अच्छा विचार रखते हुए यह कहा जा सकता है कि उनको अपने सीधेपन के कारण अपने कुटुम्ब की दशा का पूरा—पूरा ज्ञान न था। परन्तु यह बात मान ली गयी है कि उस समय रसूल (स0) के सहाबियों और इस्लाम के सच्चे सेवकों के साथ घृणित व्यवहार किये गये थे। और अपने कुटुम्बियों का पक्षपात और उनके साथ अधर्म की सहायता भी अधिक की गई थी जिसके पीछे सबके सब अत्यन्त दुखी और अधीर होकर ख़लीफा साहब की मृत्यु के सहायक बन गये। इतिहास के देखने से बनीउमैया पर इसका बहुत कुछ दोष प्रकट होता है। इसके बाद फिर दशा बदली और ख़िलाफत की गद्दी पर अधिकार करने के लिए बड़े—बड़े सहाबियों ने मिलकर हज़रत अली (अ0) को चुना और सबने उनको अपना धार्मिक तथा नैतिक नेता बनाया। परन्तु शाम के शासक अमीरे मुआविया ने जो अबुसुफ़ियान के बेटे थे और जो शाम पर अपना अधिकार कर चुके थे इस्लाम के पारस्परिक समझौते को न माना और हज़रत उस्मान के वद्य के बदले के बहाने हज़रत अली (अ0) से युद्ध करने पर उद्यत हुये जिसका परिणाम सिफ़्फ़ीन का युद्ध हुआ जिसमें सहस्त्रों मुसलमानों का ख़ून पानी की तरह बह गया। अन्त में इस युद्ध का निर्णय एक कपट की सन्धि द्वारा हुआ। यदि यह सन्धि न्याय द्वारा होती तो मुसलमानों में यह अन्तर न होता

परन्तु शोक है कि लालच ने इस कपटी समझौते को लड़ाई दंगे के रूप में परिवर्तित करके आपस की शत्रुता रूपी खाईं को और भी अधिक चौड़ा कर दिया। यह वह समय था जबकि शाम के सिंह्रासन पर बनीउमैया का पूरा–पूरा अधिकार हो गया था। इधर हज़रत अली (अ0) को कूफ़ा की मस्जिद में नमाज़ पढ़ते शहीद किया गया। उधर शाम में रसूल (स0) के कुटुम्ब का पूरी तरह अपमान किया गया और दमिश्क़ शहर बल्कि तमाम इस्लामी देशों में रसूल के कुटुम्ब को भला बुरा कहने का साहस किया गया।

उस समय की आवश्यक विशेषताएँ

अमीरे मुआविया की कुछ मुसलमान पैग़म्बर (स0) के बड़े सहाबियों में गणना करते हैं। परन्तु उनके शासन प्रबन्ध में निम्नलिखित घृणित विशेषताएँ प्रकट होती हैः

1– ख़ुदा और पैग़म्बर को बुरा कहना और नई हदीसों के गढ़ने को पाप न समझना बल्कि गढ़ने वालों को परितोषिक और अधिकार देना जैसा कि अबुलहसन इब्ने मुहम्मद मदायन वासी ने जो इस्लामी और एक बड़े ऐतिहासिक पुरुष माने जाते हैं अपनी किताबुलअहादीस में उस समय का हाल लिखा है ''मुआविया ने तमाम कर्मचारियों को लिखा कि जो हज़रत उसमान की किसी बड़ाई को बताए उसका पूरा नाम और पता मेरे पास लिखकर भेज दो और उसे बहुत परितोषिक देकर धनी कर दो।'' इसका फल यह हुआ कि हज़रत उसमान की बड़ाई की बहुत सी हदीसें गढ़ ली गईं और बहुत दिनों तक यह काम जारी रहा।.............फिर कुल शासकों (गवर्नरों) को लिखा गया कि अब हज़रत उसमान की बड़ाई में बहुत सी हदीसें इकटठा हो गई हैं। अब तुम लोग और सहाबियों के लिए हदीसें गढ़ने का प्रबन्ध करो और हज़रत अली की बड़ाइयों की हदीसों की तरह सहाबियों के लिए भी हदीसें इनाम की लालच से तैयार कराओं। हज़रत अली और उनके शीओं को जिस प्रकार हो सके बदनाम करो। इस आज्ञा को पाते ही तुरन्त सहस्त्रों हदीसें गढ़ ली गईं। उपदेशक सभाओं में और पाठशालाओ में बालकों को यह गढ़ी हुई हदीसें कुर्आन शरीफ की भांति रटाई जाने लगीं यही नहीं किन्तु लड़कियों, स्त्रियों और दास–दासियों को इन हदीसों को मुखाग्र कराना आवश्यक समझते थे। इसका अन्तिम फल यह हुआ कि इस्लामी सच्ची हदीसें इन कल्पित हदीसों से मिलकर मानने के योग्य न रहीं और ठीक बात जानने में बड़ी कठिनाई होने लगी।

2– इस्लाम के महापुरुषों को भला–बुरा कहना और गाली देने की रीति भी इस समय प्रकट हुई। शहर दमिश्क़ और शाम की मस्जिदों के मिम्बरों पर चालिस बरस तक यह रसम जारी रही और हज़रत अली को गालियाँ दी गईं।

3– इस्लामी देशों में मदिरा स्वतंत्र पूर्वक पी जाने लगी और बेचने तथा मोल लेने वालों पर कोई रोक टोक न थी, जैसा कि अब्दुर्ररहमान इब्ने सुहैल अन्सारी रसूल के सहाबी ने जब मदिरा से लदे हुए ऊँट देखे तो आपने नैज़े की नोक से मदिरा की मश्कों को फाड़ डाला। जब अमीरे मुआविया को यह समाचार मिला तब उसने कहा कि ख़ैर उस बूढ़े को सज़ा न दो क्योंकि बुढ़ापे के कारण बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। जब अब्दुर्ररहमान ने यह सुना तो कहा कि ख़ुदा की क़सम मेरी बुद्धि भ्रष्ट नहीं हुई बल्कि मैंने पैग़म्बर साहब से सुना है कि मदिरा न पीना चाहिए और न उसको बर्तन में रखना चाहिए (किताब असदुलग़ाबा इब्ने असीर जुज़री जि–3 पे–299, इसाबा हाफ़िज़ इब्ने हजर

अस्क़लानी जि–2 पे–401) इस से ज्ञात होता है कि उस समय मुसलमानों में मदिरा पीना प्रचलित हो गया था। यदि कोई सच्चा मुसलमान मदिरा पीने से लोगों को रोकता था तो वह पागल समझा जाता था।

4– बेगुनाह मुसलमानों की गर्दनें काटी गईं। समरा बिन जुन्दब, बुसर बिन अरतात और ज़ियाद बिन अबीह ने इस समय बड़ा अत्याचार किया। अब्दुल्लाह बिन अब्बास के दो छोटे बच्चे माँ की गोद में शहीद किये गये जिससे माँ पागल हो गई। (देखिये किताब इसतिआब अब्दुलबर जि–1 पे–66 मतबूआ दारुल मआरिफ़ हैदराबाद)

5– धर्म का आदर बिलकुल कम हो गया था और धार्मिक नियमों का पालन भी न होता था। अमीर मुआविया ने बड़े धमण्ड से कहा कि मैंने जारिया बिन क़ुदामा और अहनफ दो मुसलमानों के धर्म मोल ले लिये हैं। (इस्तिआब जि–1 पे–154)। मिस्रियों ने मुआविया के दरबार में आकर ख़ुदा का पैग़म्बर कह कर सलाम किया और यह बात मान ली गई। दण्ड देना तो बहुत दूर था किसी ने रोका तक नहीं। (देखिये तारीख़ तबरी जि–2 पे–184) इन दोनों घटनाओं को हमने अपने रिसाले ''क़ातिलाने हुसैन का मज़हब'' में लिखा है जिससे उस समय की इस्लामी कमज़ोरी का पता चलता है। अमीरे मुआविया का समय किसी न किसी प्रकार व्यतीत हो गया और उनके जीवन के दिन बीत गये परन्तु वे मुसलमानों के सिरों पर अन्याय का ऐसा भूत सवार कर गये जिससे इस्लाम के कई (73) भाग हो गये। उनका बेटा यज़ीद उनके बाद गद्दी पर बैठा जिसका हाल अमीरे मुआविया को पहले से मालूम था जैसा कि अल्लामा इब्ने हजर मक्की अपनी किताब तत्हीरुललिसान व लज़नान में अमीर मुआविया की तारीफ इस प्रकार लिखते हैं कि–

1– एक रोज़ मुआविया रोने लगे। मरवान ने कहा क्यों क्या हुआ? आपके रोने का क्या कारण है? उत्तर दिया

(अनुवाद) ''दुनिया में कौन सा सुख ऐसा है जो मैंने न भोगा हो। परन्तु अब आयु अधिक हो गई है, अस्थियाँ घिस गई हैं और शरीर दुर्बल हो गया है। यदि मेरे हृदय पर यज़ीद के प्रेम का अधिकार न होता तो मैं अपने लिये सत्य मार्ग प्राप्त कर लेता।'' (हाशिया सवायक़ मुहरिक़ा मतबूआ मिस्र पे–56)

दूसरी जगह पर अल्लामा इब्ने हजर लिखते हैं– (अनुवाद) ''इन शब्दों में मुआविया ने सम्पूर्ण रूप से यह स्वीकार कर लिया है कि यज़ीद के प्रेम ने मुझको सत्य मार्ग से पृथक कर दिया है और इसी की अधिकता ने मुसलमानों को ऐसे पापी के हाथों फंसाया जो उनके नरक का कारण हुआ।'' (हाशिया सवायक़ मुहरिक़ा पे–57) इसके पश्चात यह कौन कह सकता है कि अमीरे मुआविया अपने पुत्र के आचार तथा व्यहार से अपरिचित थे और उसका युवराज यह पद उसकी सज्जनता पर निर्भर था। धन के लालच से बहुत से मुसलमानों ने यज़ीद को अपना धार्मिक नेता बना ही लिया। यज़ीद ने ख़िलाफत की गद्दी पर बैठते ही संसार को पापों से परिपूर्ण कर दिया और चारों ओर अल्लाह और धर्म का घोर विरोध होने लगा। धर्म बच्चों का खेल और इस्लाम एक निरर्थक वस्तु समझा जाने लगा। यज़ीद के आचार विचार को विस्तार पूर्वक लिखने की यहाँ पर आवश्यकता नहीं। इस्लाम का माननीय इतिहास इन घटनाओं से परिपूर्ण है। वाक़दी ने संक्षेप रूप से यज़ीद के दुष्कर्मों का इस प्रकार चित्र खींचा है–

(अनुवाद) ''वह ऐसा मनुष्य था कि अपने बाप की ब्याही बीवियों, लौंडियों और बहन बेटियों

से भी भोग करता था। वह शराब पीता था और नमाज़ न पढ़ता था। (देखिये सवायक़े मुहरिक़ा इब्ने हजर मक्की पे–135)

अब बतलाइये कि इस्लामी बादशाह–क्या ख़लीफतुल मुस्लमीन और मजूसियों में कुछ भी अन्तर हुआ। अत्यन्त पापी लोग भी अपनी माँ बहनों और बेटियों से भोग करना पाप समझते हैं। समय के राजा की देखा देखी लोगों ने भी इन्हीं बातों का अनुकरण किया और धर्म बिलकुल मिट गया। बड़े–बड़े सहाबी यज़ीद की आज्ञा का पालन करते थे और किसी के मुख से उन बातों का विरोध न होता था। सिवाय पाँच मनुष्यों के सब सहाबा और पैरोकार यज़ीद को रसूल का ख़लीफा मान चुके थे। उन पाँच पुरुषों में प्रथम नाम हुसैन इब्ने अली का है और उनकी देखा देखी अब्दुल्लाह इब्ने उमर, अब्दुल्लाह इब्ने जुबैर, अब्दुर रहमान बिन अबीबक्र, अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास थे। यज़ीद की ओर से यह प्रयत्न किया गया कि इनको भी अपना अनुयायी बनाया जाए और सबसे अधिक परिश्रम हज़रत इमाम हुसैन (अ0) को सब से पहले अनुयायी बनाने में किया गया। पुराने इतिहास और इस्लाम की उस समय की दशा देखकर अली इब्ने अबी तालिब का बेटा और रसलू (स0) के कुटुम्ब का सबसे बड़ा पुरुष (इमाम हुसैन अ0) भी यदि यज़ीद का अनुयायी बन गया होता तो इस्लाम कब का लोप हो गया होता।

हज़रत हसन मुजतबा की सन्धि कर्बला की लड़ाई की प्रस्तावना थी

जो काम समय पर हो वह अच्छा होता है। यदि समय से पहले किया जाए तो उसका फल लाभदायक होने के बदले हानिकारक होता है और जो ऐसा करता है वह दोष का भागी होता है। समय सदा का एक सा नहीं रहता बल्कि ऐतिहासिक विचार से वह सदा उन्नति करता रहता है और उस की घटनाएँ भी उसी प्रकार बदलती रहती हैं। दुनिया का प्रबन्ध इसी पर निर्भर है और मनुष्य की प्राकृतिक दशा भी ऐसी ही है। इस नियम में कोई बाधा नहीं पड़ सकती। यदि हाथ या पैर का कोई घाव दवा, फाहा और मरहम से अच्छा न हो तो उसमें नश्तर लगाया जाता है। यदि फिर भी अच्छा न हो तो उसका विष शरीर भर में फैलने के भय से उस अंग को काट कर फेंक दें तो कोई बुरा न कहेगा। यदि घाव होते ही पहले ही अंग काट डालते तो वह दोष और मूर्खता का कारण समझा जाता। किन्तु यह वही उपाय था जो अन्त में अर्थात समय पर काम लाने से अच्छा समझा गया।

यदि इमाम हुसैन बिना किसी प्रकार का यत्न किये, कुटुम्बियों और मित्रों की कमी और उनके विरोध के कारण यज़ीद को नेता मान लेते तो भी वह अवश्य मारे जाते और निस्संदेह ये प्रश्न उत्पन्न होते कि आख़िर इमाम ने मेल करके दशा को सुधारने का प्रयत्न क्यों न किया? विशेष प्रतिज्ञाओं के साथ सन्धि करके अपने अभिप्राय को क्यों न प्राप्त किया? कम से कम राज्य सम्बन्धी बातों से अलग रहकर मदीने में क्यों न रहे? और कर्बला में आकर अपने को आपत्ति में क्यों डाला? इन प्रश्नों के होने के बाद भी जिनका कोई ठीक उत्तर भी न होता वह अवश्य मारे जाते जो प्रशंसनीय न होता। किन्तु यथार्थ तो यह है कि इमाम ने जो कुछ किया वह नियमानुसार था और जिसका होना आवश्यक था, यहाँ तक कि सन् 61 हिजरी में यह घटना हो गई। आरम्भ में इमाम हसन (अ0) का विशेष शर्तों पर सन्धि करना और राजकाज को दस वर्ष तक छोड़ना

और शान्तिपूर्वक रहना और उसके बाद फिर दस वर्ष तक स्वयं इमाम हुसैन (अ0) का शान्तिपूर्वक रहना परन्तु कभी–कभी ज़बानी या लिखकर अपने अधिकार को माँगना– यह सब बातें ऐसी थीं जिनका परिणाम सुधार के बदले बहुत बुरा हुआ। सन्धि पत्र की प्रतिज्ञाओं और इमाम हुसैन (अ0) के कहने के अनुसार न होना, अमानुषिक कार्यों का होना और दुश्कर्मों का बढ़ना– यह सब बातें ऐसी थीं कि हुसैन (अ0) ने अपने हार्दिक बड़े इरादे को कर्बला की भूमि पर पूरा किया। अब ऐतिहासिक भाव से यह दोष दिया जा सकता है कि सम्भवतः हुसैन (अ0) ने अज्ञान से अपने को आपत्ति में डाला और यदि वह मदीने में रहते और यज़ीद से न लड़ते तो आप का रुधिर कर्बला की भूमि पर न बहता। यह विचार वास्तव में तुच्छ है। बनी उमैया की शत्रुता बनी हाशिम और विशेषकर अली इब्ने अबी तालिब (अ0) की सन्तान से इतनी अधिक हो गई थी कि वह किसी प्रकार उनको कुशल से रहते नहीं देख सकते थे और हज़रत इमाम हुसैन (अ0) की ख़ामोशी भी उनको बुरी लगती थी। यद्यपि हज़रत इमाम हसन (अ0) से प्रत्यक्ष में सन्धि हो चुकी थी तथापि उनको विष खिलाकर मारा गया। श्रीमान ख़्वाजा हसन निज़ामी साहब देहलवी अपनी किताब मुहर्रम नामा पृष्ठ 74 और दूसरी किताब यज़ीद नामा पृष्ठ 83 में लिखते हैं– ''पहला ख़ून सय्यिदना इमाम हसन का है जो इतिहास की रिवायत से बिलकुल अमीरे मुआविया के ऊपर साबित है और कोई पुराना या नया निर्णय उनको इस हत्या से मुक्त नहीं कर सकता।'' कौन कह सकता है कि यदि इमाम हुसैन इराक़ में न आते और मदीने ही में रहते तो उनको मारने के लिए कोई गुप्त यत्न न किया जाता जैसा कि उन्के भाई इमाम हसन के साथ किया ही जा चुका था। ऐसा होने पर आपकी जान भी जाती और लोगों को सत्य हाल भी न मालूम होता बल्कि जिस प्रकार पहले इमाम हसन की शहादत से इनकार किया जाता रहा था यदि उसी प्रकार इमाम हुसैन (अ0) की शहादत से भी इनकार ही किया जाता तो अवश्य यज़ीद की जीत और हुसैन की हार मानी जा सकती थी। क्योंकि ऐसी दशा में हज़रत इमाम हसन (अ0) ने अपने अभिप्राय को प्राप्त किया और हुसैन को संसार ने भुला दिया और फिर संसार के सामने अपने को निर्दोष दिखला दिया और हुसैन ने अपनी जान से हाथ धोया और कोई फल न हुआ।

भला हुसैन (अ0) सा ज्ञानी कब इन बातों को भूल सकता था बल्कि अपने अभिप्राय को दो बातों पर निर्भर पाया। प्रथम तो यह कि चुपचाप प्राण दें और उनकी हत्या में यज़ीद के हाथों से इस्लाम के नियम भी न टूटें, दूसरे यह कि प्रत्यक्ष में अपने को मिटाकर सदैव अपने नाना के चलाये हुए इस्लाम को जीवित रखें। हज़रत इमाम हुसैन (अ0) ने अपनी दूरदर्शिता से दूसरी बात को अच्छा जानकर इस्लाम को जीवित रखने के लिए अपनी मृत्यु को अपने और इस्लाम दोनों के मिटने के बदले सहन किया। हुसैन (अ0) ने अपनी जान देकर अपने शत्रुओं के लाभ को सदा के लिए मिटा दिया और यह एक बहुत बड़ी विजय है जिसको आपने प्रत्यक्ष में मिटाकर प्राप्त किया।

हुसैन (अ0) एक सच्चे धर्म प्रचारक, उद्योगी और राजनीति के आदर्श थे

इमाम हुसैन (अ0) यथार्थ में मदीने से यह प्रेण्णा करके चले थे कि वह सत्य को सत्य और असत्य को असत्य सिद्ध करके दिखला दें, जैसा कि उन्होंने अपने अभिप्राय के पूरा करने

और यज़ीद के कुकर्मों को संसार के दृष्टिगोचर करने में वह तमाम प्रयत्न किये जो उनके उद्योग और राजनीति का पूरा परिचय देते हैं। सबसे पहले उन्होंने मदीना छोड़ने के बाद मक्के को अपने रहने के लिए चुना जिनके लिये यह सोचा जा सकता है कि इस पवित्र स्थान में लड़ना झगड़ना वर्जित है और इस तरह उनका जीवन शत्रुओं के भय से सुरक्षित रहेगा। ऐसा विचार उस मनुष्य के लिए किया जा सकता है जिसको अन्त काल तक अपनी जान बचाने का ख़याल हो। परन्तु हुसैन (अ0) तो पहले ही से मरने पर आरुढ़ थे और आने वाली घटनाओं का बराबर उच्चारण किया करते थे। इसलिए उनके सम्बन्ध में ऐसा विचार बिलकुल निर्मूल होगा। वास्तव में मक्का अरब के बीचोबीच दुनिया भर के मुसलमानों का केन्द्र था। चारों ओर से यात्री तीर्थ (हज) करने बराबर आया करते थे और यह बात धार्मिक नियमों के अनुसार मुसलमानों पर वाजिब है। हज के समय तमाम दुनिया के मुसलमान जमा होते थे और तीन महीने तक प्रसिद्ध सभा होती थी जिसमें कवि सम्मेलन और व्यापार का प्रचार होता था। इसको अस्वाकुलअरब कहा जाता था। ज़ीक़ादा से मुहर्रम तक मक्का, ताएफ और मदीने में यह सभाएँ हुआ करती थीं। इमाम हुसैन (अ0) को अरब में सब पहचानते थे यद्यपि धर्म उठ गया था और सम्भव था कि अधर्मी लोग हुसैन (अ0) को धर्मात्मा होने के कारण कदाचित न पहचानते हों। परन्तु रसूल (स0) का नाती होना, इराक़ और हिजाज़ के राजा का पुत्र होना, और अरब में सबसे बड़ा दानी (जिसके घर से कोई माँगने वाला ख़ाली न गया) और बनी हाशिम के कुटुम्ब का अगुवा होना– ये सब बातें ऐसी थीं जिनसे कोई भी अपरिचित न था और न कोई इनकार ही कर सकता था। हुसैन (अ0) ने हज का समय मक्के में रहने के लिए नियंत किया, इस से यह अभिप्राय न था कि वह अपने लिये कोई बड़ी सेना यज़ीद से लड़ने के लिए जमा करना चाहते थे। यदि वह ऐसा करना चाहते थे तो वह अवश्य कर सकते थे। यहाँ से यमन निकट था जहाँ के लोग आपके पिता के चेले थे और उनकी सन्तान से सच्चा प्रेम रखते थे। ताएफ वासी भी मुहम्मद साहब की सन्तान से विरोध न रखते थे। किन्तु हुसैन (अ0) को राज करने की इच्छा ही न थी और मक्के में उनका रहना केवल इसलिए था कि अरब के मुसलमानों को उस समय की घटनाओं का और यज़ीद के दुष्कर्मों का बोध हो जाए।

हुसैन (अ0) को मारने के लिए शाम से कुछ लोग हाजियों के भेस में भी भेजे गये थे और उनको आज्ञा थी कि यदि न मार सकें तो ज़न्जीरों में बाँधकर शाम में ले आएँ। यही वजह थी कि बिना हज किये हुसैन ने काबे को छोड़ दिया और इस तरह इस्लाम के धार्मिक नियम का पालन किया अर्थात मक्के में रुधिर (ख़ून) का बहाया जाना रोक दिया।

एकाएकी इमाम हुसैन (अ0) का हज न करना और कुटुम्ब सहित मक्का को छोड़ना साफ–साफ बताता है कि इसमें अवश्य कोई विशेषता थी, नहीं तो हुसैन (अ0) को क्या पड़ी थी कि हज को छोड़कर यात्री बने।

इमाम हुसैन (अ0) के हज न करने और मक्का को छोड़ने को अरब की क़बीलों के नेता अच्छी तरह जानते थे और दुखित भी थे जिसका कारण इतिहास से भली–भाँति ज्ञात होता है।

हुसैन इब्ने अली (अ0) कहाँ चले गये? हज भी न किया? कुटुम्ब सहित अपने नाना की क़ब्र से क्यों दूर हुए? (यज़ीद के भय से) यज़ीद क्या चाहता है? (हुसैन (अ0) से अपना बैर)।

यह असम्भव था कि रसूल का नाती पापी और शराबी की बैअत करे। इमाम हुसैन (अ0) का मक्का छोड़ना और हज न करने का कारण यज़ीद का अत्याचार था क्योंकि अरब के क़बीलों में यह बात प्रसिद्ध हो गई थी कि हाजियों के भेस में कुछ शामवासी हुसैन को मारने के लिए आए हैं। इससे अधिक क्रूरता और क्या होगी कि हरम में हुसैन को चैन न मिला उस समय ख़बरें इसी प्रकार फैला करती थीं क्योंकि तब तार टेलीफोन तो थे नहीं रोज़ाना मक्के से यात्री आते–जाते रहते थे। जो अपने देश में आते लोगों से समाचार कहते थे, इस से यह मतलब न था कि वह इमाम हुसैन (अ0) के लिए कोई बड़ी सेना इकटठा हो जाए परन्तु मतलब था– कि पहले से वह घटना सबको भली–भाँति ज्ञात थी कि हुसैन (अ0) की शहादत का कारण यज़ीद का अत्याचार है यदि ऐसा न होता तो शामवासियों को अवसर मिल जाता कि वे सत्य को असत्य और धर्म को अधर्म के रूप में संसार में प्रकट करते जिसका परिणाम यह होता कि हुसैन (अ0) से संसार को सहानुभूति न रहती और न कर्बला की इस घटना में विशेषता पायी जाती परन्तु अल्लाह की माया देखिये– कि इमाम हुसैन (अ0) निर्दोष, बेगुनाह, शहीद हुए और इस बात को संसार ने मान लिया, यज़ीद और उसके कर्मचारियों को यह अवसर न मिल सका कि इमाम हुसैन (अ0) के विमुख कोई बात गढ़ कर फैलाते। इमाम हुसैन (अ0) ने अपनी ज़िन्दगी में इस घटना को बदल दिया था और मक्का छोड़ने का कारण बताकर अपने शत्रुओं को दयालुता दिखाकर चुप कर दिया था संसार की गर्दनें आप ही आप झुक गई थी इससे अधिक धर्म प्रचार क्या हो सकता है।

हुसैन (अ0) के साथी चुपचाप धर्म प्रचारक थे

हज का समय था इराक़ में ताएफ और अरब की दूसरी जगहों के क़बीले मक्के में आ रहे थे उधर इमाम हुसैन (अ0) अपने कुटुम्ब और मित्रों सहित (जिनका समुदाय एक बड़ी सेना की भांति मालूम होता था) मक्के से जा रहे थे यात्री जानते थे हैं कि राह में यदि कुछ यात्री और मिल जाते हैं तो खोज होती है कि यह लोग कहाँ से आये हैं? कहाँ जाएँगे? फिर इमाम हुसैन (अ0) का कुटुम्ब और मित्रों का साथ जो एक सेना की भांति थे और अजीब बात यह कि हज के दो दिन बाक़ी रहे और मक्के की तरफ से आ रहा हो जबकि संसार से लोग मक्के की तरफ हज को जा रहे थे। अवश्य एक अजनबी मनुष्य को यह पूछना ज़रूरी था कि यह किसकी सेना है? कहाँ जा रही है? और हुसैन (अ0) का नाम मालूम होने पर इससे पहले हमने जो बातें लिखी है ज़रूर पूछता। जैसा कि इतिहास की पुस्तकें इसकी साक्षी हैं।

फ़रज़दक़ और हज़रत इमाम हुसैन (अ0) की भेंट एक दिन यूँ ही अचानक हो गई और अब्दुल्ला इब्ने मुती व उमर इब्ने अब्दुर्रहमान भी रास्ते में मिले और फिर उन लोगों में जो बात चीत हुई वह इतिहास से प्रकट है। कहने का अभिप्राय यह है कि हुसैन इब्ने अली (अ0) और हाशिमी जवानों की बड़ी सेना जो काबे को छोड़कर जंगलों में फिर रही थी वह स्वयं धर्म प्रचारक और सत्य पथ पर आरुढ़ थी, जो दूर–दूर के रहने वालों को सत्य बात पूछने पर प्रस्तुत करता था।

''कर्बला की भूमी पर अधर्म प्रचार''

मार्ग की सम्पूर्ण कठिन घटनाओं को

छोड़कर इमाम (अ0) की उस बड़े धर्म प्रचार का सबूत देना चाहते हैं जो कर्बला की भूमी पर हुसैन द्वारा प्रकट हुआ। उस समय जब कि ख़ून के प्यासे 30 हज़ार शत्रु सेना से इमाम का रास्ता और पानी बन्द कर दिया गया था। धर्म और जातीयता ही नहीं बल्कि मनुष्यता और प्रतिष्ठा को छोड़कर इमाम हुसैन (अ0) को मारने पर उद्यत हो गई थी। ऐसों का टेढ़े मार्ग से हटाना असम्भव था जिसको हुसैन (अ0) जानते भी थे लेकिन एक धर्म प्रचारक का कर्तव्य है कि वह सत्य की आवाज़ को ऊँचा करे और अपने कर्तव्य कर्म का भली–भांति पालन करे। इस तात्पर्य को इमाम (अ0) ने ख़ूब पूरा किया।

एक रात के लिये नमाज़ का वक़्त माँगना और इस्लामी क़ायदे का अद्वितीय प्रचार

नौ मुहर्रम को उस वक़्त जब निर्दयी यज़ीद की सेना ने आक्रमण किया और हुसैन (अ0) और उनकी थोड़ी सी सेना को मारने को प्रस्तुत हुए। हुसैन (अ0) ने अपने भाई हज़रत अब्बास (अ0) को भेजकर एक रात की मोहलत माँगी, क्यों? क्या इसलिए कि हुसैन (अ0) अपने कुटुम्ब से बिदा हो लें? अपने अज़ीज़ों को दिल भरकर एक रात और देख लें या एक रात में कोई युद्ध की सामग्री एकत्रित कर लें, नहीं बल्कि सिर्फ़ इसलिए कि आज की रात अल्लाह की प्रार्थना करें। चुनानचे उन्होंने ऐसा ही किया रात इसी तरह बिताई .....इस गिरोह की आवाज़ें अल्लाह की प्रार्थना के साथ इस तरह गूँज रही थीं जैसे शहद की मक्खी के छत्ते से आवाज़ आती है। इस प्रकार इन्होंने दिखला दिया कि कठिन से कठिन समय पर धार्मिक नियमों का पालन किया जाता है और धार्मिक जोश से बढ़कर और कोई जोश शक्ति नहीं रखता।

''दसवीं (आशूर) के दिन ज़ोहर की नमाज़''

पिछले अवसर की अपेक्षा वह कठिन अवसर था जब लड़ाई आरम्भ हो चुकी थी हुसैन (अ0) की छोटी सेना के बहुत से जवान मर चुके थे और सेना क्षीण होने लगी थी। बाणों की वर्षा और कमानों के तड़कने की ध्वनि हो रही थी परन्तु ऐसी दशा में भी ज़ोहर की नमाज़ जमाअत के साथ अदा की गई और इस नमाज़ की मिसाल दुनिया का इतिहास नहीं ला सकता। इमाम क़िबला की तरफ और आपके साथियों की सफें पीछे और दो बहादुर जवान इमाम के आगे सीना ताने खड़े हैं। कि जो तीर आए उसको अपने सीने पर रोकें जिसका फल यह हुआ कि नमाज़ ख़त्म होते उन दोनों बहादुरों में से एक सईद बिने अब्दुल्लाह ज़मीन पर गिर कर तड़पने लगता है और दुनिया से रुख़सत हो जाता है। यह घटना चुपचाप उस समय हुई परन्तु संसार को सत्य की तरफ बुलाया और मुसलमानों को होशियार किया और दूसरी तरफ यज़ीद और उसके साथियों की निर्दयता को प्रकट कर दिया।

''सत्य धर्म प्रचारक की अन्य घटनाएँ''

दसवी मुहर्रम की सुबह से लेकर सन्ध्या समय तक की घटनाएँ यदि हम लिखना चाहें तो भी यह विषय पूरा नहीं हो सकता। इसका इतिहास ही साक्षी है कि हुसैन (अ0) की सेना का हर जवान स्वयं धर्म प्रचारक था, बुरैर हमदानी की लड़ाई, हबीब इब्ने मुज़ाहिर का यज़ीद की सेना से वार्तालाप, ज़ुहैर इब्ने क़ैन का ख़ुतबा और

तमाम अज़ीज़ों और दोस्तों के वह रजज़ जिनमें से हर एक हुसैन (अ0) की शहादत के कारण बताना एक प्रचारक की भांति था। इसका प्रभाव ज्ञात हो या न हो। परन्तु एक प्रचारक की सफलता यह नहीं है कि उसकी आवाज़ पर हाँ कहने वाले बहुत पैदा हों। बल्कि उसकी सफलता यह है कि कठिन अवसरों पर अपने धर्म का भली–भांति पालन कर सके। हुसैन (अ0) की फौज के तमाम जवान बहादुरी से लड़कर शहीद हो चुके थे और हाशमी ख़ानदान के शेर भी अपने बुजुर्ग की हिमायत में काम आ गये, केवल निर्दयता का सहन करने वाले हुसैन (अ0) बाक़ी हैं और शत्रुओं की सेना घेरे हुए है इस पर दुःखों का साथ और आँखों में दुनिया अन्धेरी है परन्तु वह धर्म प्रचारक अपने कर्तव्य को एक क्षण के लिये भी नहीं भूलता।

वह ख़ुतबा पढ़ता है व्याख्यान देता है, रसूल (स0) के सहाबियों को साक्षी बनाकर अपनी हक़ीक़त का सबूत देता है– क्या इस आशा पर कि यज़ीद का लश्कर हुसैन (अ0) की हालत पर रहम खायगा या वह लोग रुपये पैसे के लोभ को त्याग करके सत्य मार्ग पर आ जायेंगे? नहीं, कदापि नहीं, हुसैन (अ0) भोले न थे। वह ख़ूब जानते थे मगर बाख़बर बनाना चाहते थे, उन्होंने कोई बात सच्चाई के प्रकट करने में नहीं उठा रखी और अन्तिम साँस तक अपने कर्तव्य का पालन कर गये।

उस वक़्त भी जब कि शिम्र का ख़न्जर आपकी गर्दन के पास आ चुका था और आप का अन्तिम समय था उस समय भी हुसैन (अ0) ने अपने क़ातिल शिम्र के सामने धर्मप्रचार किया और अपने नाना की सत्यता को प्रकट किया आपने कहा ''मेरे नाना रसूल ने सच कहा था कि तुझे मारने वाला एक कोढ़ी शख़्स होगा।''

ऐ हुसैन इब्ने अली (अ0) आप ने मरते वक़्त तक कर्तव्य को न छोड़ा अपने नाना की बातों को ख़ंजर के नीचे सच कर दिखाया। आपके ख़ून की हर बूँद सच्चे मुसलमानों के दिल में सदा ताज़ा रहेगी और उसे वे कभी न भूलेंगे।

प्रतिष्ठा और मौत की तुलनाः–

जीवन प्यारी वस्तु है और मनुष्य की प्रकृति में दुनिया का प्रेम उत्पन्न किया गया है। मनुष्य इसी के कारण संसार के कठिन से कठिन दुःखों को उठाता है। वह अपनी लज्जा के सामने धन की कुछ परवाह नहीं करता है और हर प्रकार उसकी रक्षा करता है। इस्लाम ने भी इस प्रकृति की बात को नहीं रोका बल्कि जीवन की रक्षा को आवश्यक माना है, लेकिन कभी–कभी ऐसे नाजुक अवसर आ जाते हैं कि जब मन के विचार और बुद्धि सम्बन्धी विचारों में झपट हो जाती है। जीवन अपनी अच्छाइयों के साथ इतना डरावना हो जाता है कि मनुष्य बे समझे बूझे मरना पसन्द कर लेता है और इस प्यारे जीवन को जिस पर वह हर वस्तु को न्योछावर करता है कभी नासमझी के कारण जान भी दे देता है जो किसी प्रकार प्रशंसनीय नहीं है परन्तु जिस समय प्राण बचाने से अच्छा मरना हो, और जिस समय जीवन की कठिनाइयों से साबक़ा पड़ता है, और जिस समय प्रतिष्ठा और ज़ाहरी मिटने का प्रश्न आये तो जीवन को मृत्यु पर अच्छा समझना अनुचित है। हमेशगी की ज़िन्दगी के मालिक हो जाने में, प्रतिष्ठाा वाले प्रतिष्ठा का सदक़ा प्राण को समझते हैं। हुसैन इब्ने अली (अ0) ने कर्बला में जो रास्ता नियुक्त किया था वह इन्ही नियमों पर निर्भर था यद्यपि आपकी वाणी कर्बला के मैदान की भूमि पर निकलकर मिट गई परन्तु उसका फल मज़बूत

रहने वाला हुआ।

कर्बला की घटना की विशेषतायें

धैर्य और सहायता देना इन दोनों विशेषताओं को भली भांति कर्बला के लड़ने वालों ने पूरा किया। इनमें से हर एक ने इमाम के जीवन की रक्षा को अपने से बढ़कर जाना। इमाम हुसैन (अ0) मुसल्ले पर जो जुहर की नमाज़ पढ़ रहे हैं और शत्रुओं के बाणों की वर्षा हो रही है सईद इब्ने अब्दुल्लाह और ज़ौहर इब्ने क़ैन सीने को ताने खड़े हैं। अभी नमाज़ पूरी नहीं हुई कि सईद गिर जाते हैं। इस तरह इमाम पर अपने प्राण न्योछावर करते हैं और स्वयं इमाम ने जाति की रक्षा की। अपनी जान बल्कि जान से प्यारी औलाद और अज़ीज़ों की जान और इससे बढ़कर कुटुम्ब की प्रतिष्ठा को नष्ट कर दिया और मरने से पहले तमाम मुसीबतों को उठाया लेकिन दीन इस्लाम को क़ायम कर गये और सुहानुभूति की यह हालत कि अपने हर अज़ीज़ और मित्र के दुखों में सहायक बने। प्रत्येक की मौत के कारण अलग–अलग थे परन्तु जब इमाम की शहादत का ध्यान किया जाता है तो वह तमाम दुःख इनके एक व्यक्तित्व में जमा थे। हुसैन (अ0) उस दिन अपनी जान नहीं दे रहे थे बल्कि संसार को धैर्य और सहायता को न भूलने का सबक़ सिखा रहे थे। कठिन से कठिन दुःखों के होने पर भी न घबड़ाना, दृढ़ता है और इस परीक्षा में कर्बला के लड़ने वालों का नम्बर है इनके दुःख सबसे अलग हैं। गर्दन का कट जाना एक सिपाही के लिए कोई बात नहीं परन्तु तीन दिन का भूखा प्यासा रहकर घायल होना यह बड़ी ही भारी दुःख की बात थी। छोटे बच्चों को बे पानी की मछली की तरह तड़पते देखना अपनी औलाद को तीरोतलवार में भेजना बल्कि अपने हाथ पर जिगर के टुकड़े को तीर का निशाना बनवा देना हर मनुष्य का काम नहीं है। इतनी दृढ़ता का उदाहरणइतिहास में नहीं मिलता। इनकी अदभुत सफलता का मिलना भी असम्भव है। वह मरे नहीं बल्कि हमेशा कि लिए ज़िन्दा हुए और हज़ारों को ज़िन्दा कर गये उनकी याद जब तक इस्लाम बाक़ी है रहेगी। ''अपमान के सहने से मरना अच्छा है'' यही बातें हुसैन (अ0) ने करके दुनिया को दिखा दीं।

नियम की सहायता और बलिदान

हुसैन का बलिदान दुनिया से निराला था। इस बलिदान के प्रबन्ध विचित्र थे। कर्बला के बहादुर हुसैन इब्ने अली (अ0) का नियम सबकी सहायता, इस्लामी नियमों का पालन और निर्दयी शक्ति की समानता में आत्मिक, तथा धार्मिक प्रतिष्ठा की रक्षा थी। इन्होंने अन्तिम साँस तक इस नियम को हाथ से न जाने दिया। वह अगर पहली बार अपनी जान को अर्पण कर देते तो सम्भव था कि यह अधिक प्रशंसनीय न होता। हकीम सुक़रात ने भी अपने हाथ से विष का प्याला पी लिया था और अपने जीवन को किसी अभिप्राय पर बलिदान कर दिया था परन्तु हुसैन इब्ने अली (अ0) का अभिप्राय बहुत कठिन था। वह अपने बलिदान को दुनिया से अलग दिखाना चाहते थे। उनका अभिप्राय यह था कि अपनी हर प्यारी चीज़ अपने हाथ से न्योछावर करें और अन्त में अपने जीवन को भी सत्य पर न्योछावर करें। इन्होंने सबसे पहले स्वदेश के विश्राम को त्यागा जिसके सिलसिले में हर तरह की तकलीफ उठाई। आशूर के दिन बलिदानों की श्रेणी में अपने प्यारे

मित्र साथ के खेले हुए दोस्तों को न्योछावर किया फिर एक एक अज़ीज़ को न्यौछावर किया अपने दायें बाज़ू की शक्ति हज़रत अब्बास (अ0) को न्यौछावर किया, अपने प्यारे भतीजे और दामाद क़ासिम इब्ने हसन (अ0) को न्योछावर किया अपने सबसे प्यारे बेटे हज़रत अली अकबर (अ0) को कुर्बान किया और अन्त में अपने छः महीने के बेटे हज़रत अली असग़र (अ0) को अपने हाथों पर लाकर न्यौछावर किया अभी तक दिल के टुकड़े न्यौछावर हो रहे थे अब शरीर के अंगों की बारी आई। उनको एक–एक करके न्यौछावर किया। नौबत यहाँ पहुँची कि शरीर पर बाणों को स्थान न मिलता था। तलवारों और नेज़ों से शरीर के टुकड़े टुकड़े हो गये थे। जब शरीर और दिल का प्रत्येक टुकड़ा कुर्बान हो चुका दोस्त और अज़ीज़ों में से कोई बाक़ी न रहा और वे भी न्यौछावर हो चुके। एक एक नेज़े पर सैकड़ों तीर और एक–एक तलवार पर सैकड़ों तलवारें पड़ चुकीं। तीर भी अपना हौसला निकाल चुके अब हुसैन (अ0) के पास सिवाय आत्मा के न्यौछावर करने के और कोई चीज़ बाक़ी न थी। एक सिर और ग्रीवा में सम्बन्ध शेष रह गया था। इन कठिन घटनाओं के बाद सर और गर्दन की जुदाई कोई बड़ी बात न थी। अस्र के होते होते हुसैन (अ0) इस कुर्बानी में भी सफल हुए। और शिम्र के खंजर से जिस्म और गर्दन की जुदाई भी हुई।

आकाश लाखों बरस चक्कर लगाये संसार में अत्यन्त उलटफेर हो जाए लेकिन इतने बड़े प्रशंसनीय बलिदान की मिसाल नहीं पैदा हो सकती।

''हुसैन (अ0) की शहादत के बाद''

बीबी फातिमा (स0) का चाँद छिप चुका है और शत्रु अपने ज़ाहिरी मतलब में सफल हो चुके हैं। अब कूफा और शाम के बाज़ार है और बनी हाशिम के घरों की प्रतिष्ठा–पूर्ण स्त्रियाँ और नेज़ों पर कर्बला में शहीद होने वालों के सर हैं। देखने वाले प्रत्यक्ष में इस दृश्य को रसूल (स0) के कुटुम्ब का बहुत अपमान समझते होंगे परन्तु बात यह है, कि इस समय हुसैन (अ0) का धर्म प्रचार उन्नति पर था अगर ध्यान से देखे तो नेज़े पर हुसैन (अ0) का सर जिसके माथे पर अल्लाह के सजदों का निशान पड़ा हुआ है। चेहरे से नूर प्रकट है होंठ कलामे मजीद पढ़ते हैं दूसरी और प्रतिष्ठा पूर्ण स्त्रियाँ जो इस अजनबियों के गिरोह से नंगे सर, वग़ैर चादर के लज्जा के साथ पवित्रता के लिबास में थीं और इनके वह सच्चाई से भरे हुए ख़ुतबे थे जो सुनने वालों के दिलों को हिला देते थे। यह वह चीज़ें हैं जिन्होंने सच्चाई के शरीर में जान डाल दी। समय के सामने मूर्खता और कमीनेपन को प्रकट कर दिया संसार को पूरब से लेकर पश्चिम तक हुसैन इब्ने अली (अ0) का रोने वाला और यज़ीद के कर्तव्य एवं कर्म से घृणित कर दिया। इसका फल यह था कि आज संसार के कोने–कोने में हुसैन (अ0) का नाम है और हिजाज़ का हक़ीक़ी बादशाह करोड़ों लोगों की क़यामत तक हुकूमत कर रहा है और बनी उमैया के अन्याय का दीपक ऐसा बुझा कि अब नाम लेने वाला भी नहीं। संसार ने देख लिया कि ज़ालिम कौन है और अन्याय का सहने वाला कौन है। अन्याय के सहने का फल क्या होता है और निर्दयता को सहने की क्या प्रतिष्ठा होती है।

इति शुभम